राजेश टंडन

सभी के लिए सहभागी नागरिकता और लोकतंत्र

जैसे-जैसे भारत जलवायु परिवर्तन से लेकर शहरीकरण तक जटिल विकास और शासन चुनौतियों से जूझ रहा है, भागीदारी वाला लोकतंत्र समावेशी, जवाबदेह और स्थायी विकास की दिशा में एक रास्ता दिखाता है। सक्रिय नागरिक, सशक्त समुदाय और जवाबदेह स्थानीय सरकारें इस विज़न की नींव बनाते हैं। इस प्रकार भागीदारी न केवल विकास का एक साधन है, बल्कि लोकतांत्रिक जीवन का ही एक आधार स्तंभ है।

भारत की आज़ादी के बाद की विकास यात्रा के दौरान, नागरिकों को सरकार के नेतृत्व वाली कल्याणकारी योजनाओं के निष्क्रिय लाभार्थियों के रूप में देखने से लेकर, उन्हें विकास के सक्रिय एजेंट, सह-निर्माता और संरक्षक के रूप में मान्यता मिलने तक गहरा बदलाव आया है। यह परिवर्तन न तो सीधा था और न ही स्वचालित; यह निम्न वर्ग की भागीदारी की ऐतिहासिक परंपराओं, धीरे-धीरे होने वाले नीतिगत सुधारों, संस्थागत प्रयोगों और लोकतंत्र को गहरा करने की बढ़ती मांग के माध्यम से उभरा। भारत की विकास योजना की शुरुआती दिशा, जो पंचवर्षीय योजनाओं पर केंद्रित थी, राष्ट्र निर्माण की तात्कालिकता से आकार लेती थी। शुरुआती योजनाओं में औद्योगीकरण, कृषि विस्तार और बड़े पैमाने पर बुनियादी ढांचे को प्राथमिकता दी गई। ये ऐसे प्रयास थे जिन्होंने सरकार को विकास के केंद्र में और नागरिकों को इसकी योजनाओं के प्राप्तकर्ता के रूप में स्थापित किया। यह केंद्रीकृत मॉडल, हालांकि एक युवा राष्ट्र की तत्काल जरूरतों के लिए आवश्यक था, लेकिन इसने निर्भरता की संस्कृति बनाई, जहां विशेषज्ञता ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होती थी, और स्थानीय ज्ञान को नज़रअंदाज़ किया गया।

हालांकि, 1960 के दशक के अंत और 70 के दशक तक, इस मॉडल की सीमाएं दिखाई देने लगीं। ज़मीनी स्तर के सबूतों ने स्थिरता, स्वामित्व की कमी और संसाधनों के अप्रभावी उपयोग के मुद्दों की ओर इशारा किया। उसी समय लोक संस्कृति, आपसी सहायता और सामूहिक निर्णय लेने में निहित भागीदारी की वैकल्पिक परंपराओं को विचार- विमर्श में पहचान मिलने लगी। पॉलो फ्रेयर और महात्मा गांधी जैसे विचारकों से प्रभावित होकर, साक्षरता, स्वास्थ्य, कृषि और सामाजिक लामबंदी में समुदाय-नेतृत्व वाली प्रथाओं के उद्भव ने इस धारणा को चुनौती दी कि गरीब निष्क्रिय हैं या विकास को आकार देने में असमर्थ हैं। इन विचारों ने सहभागी अनुसंधान और समुदाय-आधारित विकास के लिए बौद्धिक आधार तैयार किया, जिससे एक नए प्रतिमान को आकार लेने में मदद मिली।

भागीदारी वाला विकासः शुरुआती दौर

1980 के दशक के मध्य में सार्वजनिक नीति में महत्वपूर्ण बदलाव कर इसे भागीदारी वाले विकास पर केंद्रित किया गया, जब भारत ने दो प्रमुख मंत्रालयों, पर्यावरण तथा वन मंत्रालय (1985 में गठित) और ग्रामीण विकास मंत्रालय (1980 में गठित) में प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन में समुदाय की भागीदारी के साथ प्रयोग करना शुरू किया। सामाजिक वानिकी (1976) और संयुक्त वन प्रबंधन (राष्ट्रीय वन नीति, 1988 और संयुक्त वन प्रबंधन दिशानिर्देश, 1990) जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमों ने ग्राम वन समितियों का गठन करके खराब हो चुके वनों की सामुदायिक सुरक्षा और पुनर्जनन को बढ़ावा दिया। साथ ही, ग्रामीण विकास मंत्रालय ने एक वाटरशेड कार्यक्रम शुरू

राजेश टंडन, संस्थापक-अध्यक्ष, पार्टिसिपेटरी रिसर्च इन एशिया (पीआरआईए), नई दिल्ली; सह-अध्यक्ष, यूनेस्को चेयर इन कम्युनिटी-बेस्ड रिसर्च एंड सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी इन हायर एजुकेशन। ई-मेलः rajesh.tandon@pria.org

किया, जो एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (आईडब्ल्यूडीपी 1989) और वर्षा सिंचित क्षेत्रों के लिए राष्ट्रीय वाटरशेड विकास कार्यक्रम (एनडब्ल्यूडीपीआरए 1990-91) में परिणत हुआ। इन कार्यक्रमों ने उपयोगकर्ता समूहों, वाटरशेड समितियों और समुदाय-आधारित योजना को संस्थागत बनाया। उसी समय, शिक्षा क्षेत्र में ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डीपीईपी, 1994) के माध्यम से सामुदायिक जुड़ाव को औपचारिक रूप देने के प्रयास आरंभ किए गए। यह एक प्रमुख सुधार पहल थी जिसने ग्राम शिक्षा समितियों और स्कूल प्रबंधन समितियों को प्रोत्साहित किया। ये पहल विशेषज्ञ-नेतृत्व वाले, ऊपर से नीचे के दृष्टिकोण से ऐसे मॉडल की ओर एक क्रमिक लेकिन स्पष्ट बदलाव को दर्शाती हैं जो समुदायों को विकास में भागीदार के रूप में मानते थे। उन्होंने भागीदारी वाली संरचनाओं की नींव रखी जो बाद में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के लिए सबसे महत्वपूर्ण बन गईं।

इन संस्थानों ने न केवल सेवा वितरण में सुधार किया बल्कि स्थानीय नेतृत्व के लिए नए स्थान भी बनाए। इस अवधि के दौरान पंचायती राज संस्थानों के मूल्यांकन अध्ययनों से पता चला कि ऐसी भागीदारी ने परिणामों में सुधार किया, जवाबदेही को मज़बूत किया, और स्थानीय नेतृत्व को बढ़ावा दिया, खासकर जब महिलाओं और हाशिए पर पड़े समूहों को सार्थक रूप से शामिल किया गया था। फिर भी ये संरचनाएं अक्सर औपचारिक शासन संस्थानों के समानांतर मौजूद थीं, जिससे तनाव पैदा हुआ और स्थिरता तथा लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के साथ तालमेल के बारे में सवाल उठे।

भागीदारी वाला शासन

दूसरा प्रमुख बदलाव 1992-93 में 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधनों के साथ आया, जिसने विकेन्द्रीकृत स्थानीय शासन को संस्थागत बनाया। इन संशोधनों ने पंचायती राज संस्थानों और शहरी स्थानीय निकायों की भूमिका को विकास कार्यक्रमों की योजना, कार्यान्वयन और निगरानी के लिए ज़िम्मेदार संवैधानिक निकायों के रूप में पुष्टि की। उनकी भूमिका ने गहन भागीदारी वाले विकास की शुरुआत को चिह्नित किया, जिसमें भागीदारी को अस्थायी परियोजना-आधारित समितियों से वैधानिक रूप से अनिवार्य संरचनाओं में स्थानांतरित किया गया। ग्राम सभाएं, वार्ड समितियां, स्थायी समितियां और भागीदारी वाला विकेन्द्रीकृत नियोजन ऐसे तंत्र बन गए जिनके माध्यम से नागरिक सीधे संसाधन आवंटन और निर्णय लेने को प्रभावित कर सकते थे। निर्वाचित स्थानीय सरकारों के साथ भागीदारी वाली संरचनाओं के एकीकरण ने भारत को एक ऐसे मॉडल के करीब लाने में मदद की जहां शासन और भागीदारी एक-दूसरे को मज़बूत करते हैं। 1990 के दशक के आखिर और 2000 के दशक की शुरुआत में, राष्ट्रीय और राज्य दोनों सरकारों ने विकेन्द्रीकृत योजना का विस्तार किया, जिससे जिला योजना समितियों और ग्राम सूक्ष्म-नियोजन प्रक्रियाओं को मज़बूत किया गया। पहले से उभरी हुई भागीदारी वाली संस्थाएं (जैसे वाटरशेड समितियां, वन संरक्षण समूह और शिक्षा समितियां) अब सीधे पंचायती राज संस्थाओं के साथ जुड़ गईं, जिससे अधिक जवाबदेही और प्रतिक्रियाशीलता के अवसर पैदा हुए। भागीदारी वाली संरचनाओं को निर्वाचित शासन से जोड़कर, भारत ने सक्रिय नागरिकता के एक नए चरण में प्रवेश किया, जहां समुदायों ने संसाधनों, सेवा वितरण और विकास प्राथमिकताओं पर निर्णयों को प्रभावित किया।

महिला समूहों और आजीविका संस्थानों का विस्तार

तीसरा बड़ा सार्वजनिक नीतिगत बदलाव 1998 और 2003 के बीच हुआ, जब आजीविका कार्यक्रमों का भागीदारी वाला स्वरूप नाटकीय रूप से बढ़ा। इस अवधि में स्वयं सहायता समूहों को मज़बूत करके और इन समूहों तथा परिसंघों के उदय के माध्यम से महिलाओं के नेतृत्व वाले वित्तीय और सामाजिक समूहों को औपचारिक रूप दिया गया। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना (एसजेजीएसवाई, 1999) जैसी नीतियों ने स्वयं सहायता समूहों को गरीबी उन्मूलन और महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण के लिए प्राथमिक माध्यम के रूप में संस्थागत बनाया। स्वयं सहायता समूह बचत और ऋण समूहों से सामाजिक लामबंदी, स्थानीय नेतृत्व और राजनीतिक भागीदारी के मंच बन गए। उनके परिसंघों ने बाज़ारों और बैंकों के साथ मोलभाव करने की क्षमता हासिल की, जिससे महिलाएं सार्वजनिक कर्ता के

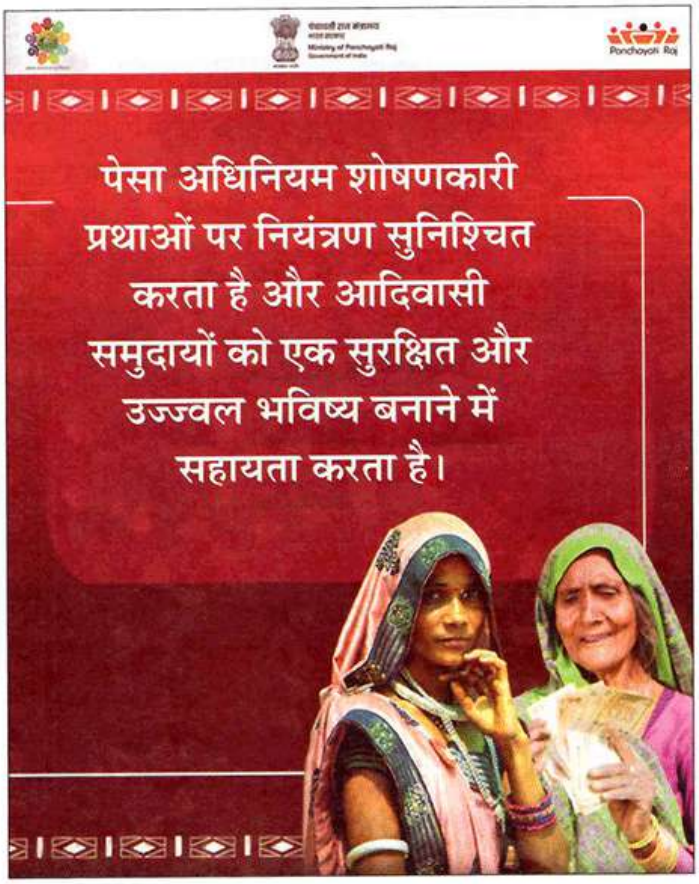

रूप में उभरीं, जो पंचायत के फैसलों और सार्वजनिक कार्यक्रमों को प्रभावित करने में सक्षम थीं। इस युग ने सार्वजनिक नीति में एक बड़ा बदलाव किया, जिसमें महिलाओं के समूहों को आर्थिक विकास और लोकतांत्रिक मज़बूती दोनों के साधन के रूप में मान्यता दी गई। उनके फेडरेशन और क्लस्टर ने बड़े पैमाने पर काम करने और मोलभाव करने की शक्ति प्रदान की, जिससे महिलाएं बाज़ारों में शामिल हो सकीं, बैंकों के साथ बातचीत कर सकीं और स्थानीय निर्णय लेने की प्रक्रिया को प्रभावित कर सकीं। 2000 के दशक में किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) के उदय ने छोटे जमींदारों के बीच सामूहिक कार्रवाई को और संस्थागत बनाया, जिससे किसानों को उपज इकट्ठा करने, नई तकनीकों तक पहुँचने और बाज़ार संपर्क को मज़बूत करने में सहायता मिली। इन संस्थानों ने व्यक्तिगत आजीविका संघर्षों से सामूहिक आर्थिक नागरिकता की ओर रुख किया।

ग्राम पंचायत विकास योजना (जीपीडीपी), जिसे 2015 से अनिवार्य किया गया है, के तहत हर ग्राम पंचायत को ग्राम सभाओं, स्वयं सहायता समूह परिसंघों और सामुदायिक समूहों को शामिल करते हुए भागीदारी प्रक्रियाओं के माध्यम से वार्षिक योजनाएँ तैयार करना आवश्यक है। साथ ही कृषि क्षेत्र में भी किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) का, खासकर 2013 के बाद इन संगठनों पर राष्ट्रीय नीति और उसके बाद 10,000 किसान उत्पादक संगठन योजना (2020) के माध्यम से बड़े पैमाने पर विस्तार के बाद उदय हुआ। इन संस्थानों ने छोटे किसानों की मोलभाव करने की शक्ति को मज़बूत किया, जिससे सामूहिक आर्थिक नागरिकता को बढ़ावा मिला। जीपीडीपी, सामाजिक लेखापरीक्षा और उत्पादक संगठनों ने साथ मिलकर,बड़े पैमाने पर भागीदारी को संस्थागत बनाया। जैसे-जैसे भागीदारी वाले संस्थान अधिक व्यापक हुए, स्थानीय शासन संरचनाओं के साथ उनके एकीकरण से गहरे लोकतांत्रिक लाभ हुए। जब स्वयं सहायता समूह परिसंघों ने गाँव के विकास की योजनाएँ बनाने के लिए पंचायतों के साथ मिलकर काम किया या वाटरशेड समितियों ने अपनी छोटी योजनाओं को ग्राम सभा के फैसलों के साथ जोड़ा, तो नागरिक भागीदारी और शासन के बीच की सीमाएँ खत्म होने लगीं। भागीदारी एक अलग गतिविधि होने के बजाय शासन का एक ज़रूरी हिस्सा बन गई। इस जुड़ाव से स्थानीय संस्थानों, पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ी। सबसे ज़रूरी बात यह है कि इसने नए स्थानीय नेताओं के उदय को भी बढ़ावा दिया। स्वयं सहायता समूहों में महिलाएँ, वन समितियों में आदिवासी युवा, पंचायतों में दलित प्रतिनिधि और वाटरशेड कार्यक्रमों में ज़मीनी स्तर के इनोवेटर आत्मविश्वास और वैधता के साथ फैसले लेने की स्थिति में आने लगे। इस तरह भागीदारी सामाजिक न्याय और राजनीतिक सशक्तीकरण का एक जरिया बन गई, जिससे ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर पड़े समूहों को सार्वजनिक प्रणालियों को प्रभावित करने का मौका मिला (योजना आयोग, 1951-2012)।

भागीदारी को बढ़ावा देना, सत्ता और सामाजिक अनुक्रम का सामना करना

जैसा कि फैरेल और टंडन (2016) तर्क देते हैं, भारत में सामुदायिक जुड़ाव की गहरी समझ के लिए उन अनुक्रमों का सामना करना ज़रूरी है जो रोज़मर्रा के सामाजिक संबंधों को संरचित करते हैं - विशेष रूप से पितृसत्ता, जाति, वर्ग और राज्य संस्थानों की शक्ति। शासन में भागीदारी सिर्फ एक तकनीकी अभ्यास नहीं है, बल्कि स्वाभाविक रूप से एक राजनीतिक प्रक्रिया है जिसमें ग्राम सभा, वार्ड सभा, स्थायी समितियाँ और स्थानीय उपयोगकर्ता समूह प्रतिस्पर्धा और बातचीत के अखाड़े बन जाते हैं। भागीदारी को सिर्फ एक गतिविधि के रूप में मानने से अक्सर तब तक प्रमुख सामाजिक मानदंड दोहराए जाते हैं, जब तक कि जानबूझकर उन्हें बदला न जाए, खासकर जेंडर के संबंध में। महिलाएँ भागीदारी मंचों पर मौजूद हो सकती हैं, फिर भी पितृसत्तात्मक अपेक्षाओं, प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व, या परिवार के पुरुष सदस्यों के नियंत्रण के कारण चुप रहती हैं या हाशिए पर चली जाती हैं। इसलिए, भागीदारी की राजनीति को जेंडर-संवेदनशील बनाने के लिए आरक्षण के माध्यम से जगह बनाने से कहीं अधिक की जरूरत है; इसके लिए जानबूझकर सुविधा प्रदान करने, नेतृत्व विकास और सुरक्षित महिला-नेतृत्व वाले मंचों, जैसे स्वयं सहायता समूहों, महिला मंडलों और उनके समूहों के निर्माण की आवश्यकता है। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण अकेले जेंडर-आधारित शक्ति गतिशीलता पर ध्यान दिए बिना, समावेशन की गारंटी नहीं देता है, क्योंकि विकेंद्रीकृत संस्थान मौजूदा असमानताओं को ही दर्शा सकते हैं।

इसलिए, सच्चा सामुदायिक जुड़ाव सक्रिय नागरिकता को मज़बूत करने वाला होना चाहिए, जिससे महिलाओं और हाशिए पर पड़े अन्य समूहों को अधिकारों का दावा करने, स्वायत्त रूप से भाग लेने और शक्ति पर बातचीत करने में सक्षम बनाया जा सके।

सभी के लिए सहभागी नागरिकता और लोकतंत्र

पिछले पाँच दशकों में सहभागी विकास को बढ़ावा देने में भारत के अनुभव दर्शाते हैं कि सहभागी विकास सामाजिक-आर्थिक विकास में समावेश, जवाबदेही और सार्वजनिक तथा निजी निवेश में स्वामित्व सुनिश्चित करने के लिए सार्थक हो सकता है। जैसा कि टंडन (2001, 2008) तर्क देते हैं, नागरिकता सिर्फ एक क़ानूनी पहचान नहीं है, बल्कि एक जीवित अनुभव है जो आवाज़ पहचान और सार्वजनिक संस्थानों के साथ रोज़मर्रा की बातचीत से आकार लेती है। सहभागी संरचनाएँ लोकतांत्रिक संस्कृति को तब मज़बूत करती हैं जब वे एजेंसी, नेतृत्व और सामूहिक स्वामित्व को बढ़ावा देती हैं। सामंजस्य, वैधता और दीर्घकालिक लोकतांत्रिक स्थिरता के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि सहभागी संरचनाएँ स्थानीय शासन को दरकिनार करने के बजाय उसकी पूरक बनें।

सभी के लिए सहभागी लोकतंत्र को सफल बनाने के लिए स्थानीय शासन संस्थानों की क्षमताओं तथा संसाधनों को और मज़बूत करने की आवश्यकता है। पंचायतों में बहुत अधिक निवेश किया गया है, नगर पालिकाओं और अन्य शहरी स्थानीय निकायों (यूएलबी) के लिए भी इसी तरह के प्रयासों को बढ़ाने की आवश्यकता है। नागरिकता शिक्षा और जागरूकता कार्यक्रमों में निवेश नई पीढ़ी के युवाओं के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है। डिजिटल तकनीक का उपयोग करने में उनकी सुविधा को देखते हुए, सहभागी शासन के साथ प्रौद्योगिकी को एकीकृत करने के और प्रयास उनकी भागीदारी को बढ़ा सकते हैं। ऐसे प्रयासों को परोपकारी और नागरिक समाज द्वारा बढ़ावा दिया जाना चाहिए। हालांकि सरकारें राष्ट्रीय कार्यक्रम शुरू करती हैं, सरकार की पहलों को पूरा करने के लिए सिविल सोसाइटी, सीएसआर और दूसरे परोपकारी प्रयासकर्ताओं द्वारा स्थानीय, निचले स्तर पर सुविधाओं को मज़बूत करने की जरूरत है।

जैसे-जैसे भारत जलवायु परिवर्तन से लेकर शहरीकरण तक जटिल विकास और शासन चुनौतियों से जूझ रहा है, भागीदारी वाला लोकतंत्र समावेशी, जवाबदेह और स्थायी विकास की दिशा में एक रास्ता दिखाता है। सक्रिय नागरिक, सशक्त समुदाय और जवाबदेह स्थानीय सरकारें इस विज़न की नींव बनाते हैं। इस प्रकार भागीदारी न केवल विकास का एक साधन है, बल्कि लोकतांत्रिक जीवन का ही एक आधार स्तंभ है। ❑

(सह-लेखक, अंशुमन करोल, लीड - गवर्नेंस और क्लाइमेट एक्शन, पार्टिसिपेटरी रिसर्च इन एशिया (पीआरआईए), नई दिल्ली, ईमेलः anshuman.karol@pria.org)

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद्र			
नई दिल्ली	पुस्तक दीर्घा, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड	110003	011-24367260
पुणे	ग्राउंड फ्लोर, कैरियर बिल्डिंग, महादाजी शिंदे, बीएसएनएल, टीई कंपाउंड, क्लब के पास, कैंप	411001	
कोलकाता	8, एस्प्लेनेड ईस्ट	700069	033-22488030
चेन्नई	'ए' विंग, राजाजी भवन, बेसेंट नगर	600090	044-24917673
तिरुवनंतपुरम	प्रेस रोड, गवर्नमेंट प्रेस के निकट	695001	0471-2330650
हैदराबाद	कमरा सं. 204, दूसरा तल, सीजीओ टावर, कवाड़ीगुड़ा, सिकंदराबाद	500080	040-27535383
बेंगलुरू	फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला	560034	080-25537244
पटना	बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ	800004	0612-2675823
लखनऊ	हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-एच, अलीगंज	226024	0522-2325455
गुजरात	4-सी, नेप्च्यून टावर, चौथी मंजिल, आश्रम रोड, अहमदाबाद	380009	079-26588669
गुवाहाटी	दूरदर्शन कैम्पस, आर जी बरूआ रोड, कामरूप मेट्रोपोलिटन, असम	781024	9101982938